विष्णुपुराण में वर्णितत अतिथि सत्कार की भावना की वर्तमान समय में प्रासंगिकता

डा० रेखा सिहं (देवी)

सारांश

पुराण भारतीय संस्कृति के गौरव ग्रन्थ हैं जिसमें विविध विषयों में उच्च कोटि का ज्ञान प्राप्त होता है। विष्णु पुराण में ''अतिथि सत्कार'' विषयक अत्यन्त प्रेरणास्पद वर्णन प्राप्त होता है। अतिथि सेवा का आध्यात्मिक महत्व है क्योंकि अतिथि सेवा से व्यक्ति के पाप नष्ट हो जाते हैं और वह कल्याण की ओर अग्रसर होता है। सम्प्रति मनुष्यों में वैयक्तिता की भावना घर कर गयी है। अतः 'विष्णुपुराण' सम्बन्धी अतिथि सत्कार की भावना को आत्मसात करने की महती आवश्यकता है। इस शोधपत्र मे विष्णुपुराण मे वर्णित अतिथि सत्कार की प्रासंगिकता पर विचार किया गया है।

भारतीय संस्कृति सम्पूर्ण विश्व में बड़े गौरवपूर्ण स्थान की अधिकारिणी है। किसी भी संस्कृति को उठाते या गिराते हैं – वह मूल्य जो उस देश के वासियों के कार्य–व्यवहार के अभिन्न अंग होते हैं। भारतीय संस्कृति को गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में 'संस्कृत साहित्य' की भूमिका अनदेखी नहीं की जा सकती है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद् व समस्त लौकिक साहित्य का एक–एक सूक्त या श्लोक अनमोल हीरे के समान है, जिसकी चमक से चमत्कृत हुए बिना कोई रह ही नहीं सकता। वस्तुतः पुराण भारतीय संस्कृति के गौरव ग्रन्थ है।

'पुरा परम्परां वक्ति पुराणं तेने वै स्मृतम्।[1] अर्थात् प्राचीन परम्परा के प्रतिपादक ग्रन्थों को पुराण कहते हैं। वेदों का संरक्षण और वेद मंत्रों का जो अर्थ एवं ज्ञान है उसे जनता तक पहुँचाने के लिए प्राचीन ऋषियों ने अनेक उपाय किये, जिनमें इतिहास–पुराण का लेखन भी एक कार्य है क्योंकि जिनको वेद का ज्ञान नहीं होता उन सभी शूद्र और अज्ञानी द्विजों का भी कल्याण होना चाहिए। पुराणों में व्यक्ति के लौकिक व्यवहार से सम्बन्धित अनेक बातों को तर्कपूर्ण ढंग से प्रतिपादित किया गया है। पुराणों के मध्य विष्णुपुराण का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है, जिसके रचयिता पराशर ऋषि हैं। इस पुराण का साहित्य, सांस्कृतिक, दार्शनिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक महत्व है।

विष्णु पुराण में गृहस्थ के कर्तव्यों को बताने के प्रसंग में 'अतिथि सत्कार' विषयक

अनेक वर्णन आये हैं। अतिथि का तात्पर्य है – जिसके आने की कोई तिथि निश्चित न हो)। अतिथि सत्कार की महत्ता बताते हुए विष्णु पुराण में कहा गया है –

अतिथिर्यस्य भग्नांशो गृहात्प्रतिनिवर्तते।
स दत्वा दुष्कृतं तस्मै पुण्यमादाय गच्छति।।[2]

अर्थात् जिसके घर से अतिथि निराश होकर लौट जाता है, उसे अपने समस्त दुष्कर्म देकर वह उसके पुण्य कर्मों को स्वयं ले जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि अतिथि जिस घर में भी आये वह सन्तुष्ट होकर जायें, गृहस्थ उपलब्ध संसाधनों के अनुसार अतिथि का सत्कार कर उसे संतुष्ट करें। अतिथि भी जिस घर में आयेगा उस गृहस्थ या व्यक्ति से वह भी उसकी स्थिति के अनुसार ही सम्मान की अपेक्षा करेगा।

अतिथि के प्रति मन में बहुत ही सात्विक भाव होने चाहिए। ऐसा वर्णन हमें विष्णुपुराण में प्राप्त होता है।

अवज्ञानमहंकारो दम्भश्चैव गृहे सतः।:
परितापोपघातौ च पारूष्यं च न शस्यते।।[3]

गृहस्थ के लिए अतिथि के प्रति अपमान, अहंकार और दम्भ का आचरण करना उचित नहीं है क्योंकि देव पूजन के समय उपासक को अपना समस्त अहम् भाव व रागद्वेष की भावना को छोड़ देना चाहिए।

पौराणिक युग में अतिथि कौन–कौन व्यक्ति हो सकते हैं, इसके विषय में कहा गया है–

इत्येतेऽतिथयः प्रोक्तः प्रागुक्ता भिक्षवश्चये।
चतुरः पूजयित्वैतान्नृपः पापात्प्रमुच्यते।।[4]

अर्थात् तीन पहले (देवता, अतिथि और ब्राह्मण) तथा भिक्षुगण ये चारो अतिथि कहलाते हैं। हे! राजन् इन चारों का पूजन करने से मनुष्य समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

जिस प्रकार हम जानकर या अज्ञानतावश पापकर्म करने के पश्चात, प्रायश्चित स्वरूप किसी देवता की उपासना या यज्ञ–अनुष्ठान आदि करते हैं, जिससे हमारे पापकर्म का प्रभाव कम हो जाये या समाप्त हो जाये, उसी प्रकार अतिथि रूपी देवता को असन्तुष्ट करने से जहाँ एक ओर हम पाप के भागीदार बनते हैं वहीं दूसरी ओर उसे सन्तुष्ट करने से मनुष्य समस्त पापकर्मों से मुक्ति पाकर कल्याण की ओर अग्रसर होता है।

वेदों या पुराणों में कोई बात निराधार नहीं दी गयी है, अपितु उसको सिद्ध करने के लिए तर्क भी दिये गये हैं। अतिथि को पूजने से व्यक्ति के पाप नष्ट हो जाते हैं, इसको सिद्ध करने के लिए आगे कहा गया है–

धाता प्रजापतिः शक्रो वह्निवसुर्गणोऽर्यमा।

प्रविश्यातिथिमेते वै भुञजन्तेऽन्नं नरेश्वर।।[5]

हे नरेश्वर! धाता, प्रजापति, इन्द्र, अग्नि, वसुगण और अर्यमा ये समस्त देवगण अतिथि में प्रविष्ट होकर अन्न भोजन करते हैं। इसी कारण एक अकेला अतिथि ही कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है।

हमारी संस्कृति में पंचं महायज्ञों (ब्रह्म यज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ भूतयज्ञ एवं नृयज्ञ) में अतिथि यज्ञ (नृयज्ञ) का महत्वपूर्ण स्थान है। इस यज्ञ के द्वारा घर में आये हुए अतिथि, संन्यासी तथा परोपकारी जनों का सत्कार कर उन्हें यथाशक्ति अन्न आदि के द्वारा सन्तुष्ट किया जाता है।[6] मनुस्मृति में एक रात ठहरने वाले को अतिथि माना गया है–

एकरात्रं तु निवसन्नतिथिर्ब्राह्मणः स्मृतः।
अनित्यं हि स्थितो यस्मात्तस्मादतिथिरूच्यते।।[7]

आगे भी कहा गया है –

तस्मादतिथिपूजाय यतेत सततं नरः।
स केवलमघं भुड्.क्ते ह्यतिथिं बिना।।[8]

अतः मनुष्य को निरन्तर अतिथि पूजा के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए, जो पुरूष अतिथि के बिना भोजन करता है, वह तो केवल पाप ही भोग करता है। प्रत्येक गृहस्थ का यह कर्तव्य है कि वह जब भोजन बनाये तो केवल अपने लिए ही नहीं अपितु अतिथि को भी ध्यान मे रखें। ऐसा केवल यहीं नहीं अन्यत्र भी कहा गया है–

भुञ्जते ते त्वधं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्।।[9]

अघं स केवलं भुड्.क्तेयः पचन्त्यात्मकारणात्।।[10]

केवलाघो भवति केवलादी।।[11]

कहने का तात्पर्य यह है कि जो केवल अपने लिए भोजन बनाता है, वह अन्न नहीं पाप भक्षण करता है।

''अतिथि' के आगमन पर सामर्थ्यानुसार उसकी सेवा करने की बात महर्षि पराशर कहते है–

अतिथिं चागतं तत्र सशक्त्या पूजयेद्बुधः।
पादशौचासन प्रह्वस्वागतोक्त्या च पूजनम्।।
ततश्चान्नप्रदानेन शयनेन च पार्थिव।।[12]

अर्थात् बुद्धिमान पुरूष उस समय (भोजन के समय) आये हुए अतिथि का भी सामर्थ्य अनुसार सत्कार करे। हे राजन्! प्रथम पांव धुलाने, आसन देने और स्वागत सूचक, विनम्र वचन कहने से तथा फिर भोजन कराने व शयन कराने से अतिथि का

सत्कार किया जाता है। आगे भी कहा गया है–

अन्नशाकाम्बुदानेन स्वशक्त्या पूजयेत्पुमान्।
शयनप्रस्तरमहीप्रदानैरथवापि तम्।।[13]

मनुष्य को चाहिए कि अपनी शक्ति के अनुसार उसे भोजन के लिए अन्न, शाक या जल देकर तथा सोने के लिए शय्या या घास–फूस का बिछौना अथवा पृथ्वी ही देकर उसका सत्कार करें। यही भाव महाभारत में भी व्यक्त हुआ है–

घर में कुछ न होने पर भी कुशों का आसन, बैठाने के लिए स्थान, ठण्डा पानी और मीठी वाणी ये चार वस्तुऐं अवश्य होती हैं। इन चार वस्तुओं से अतिथि का सत्कार करना चाहिए।

तृणानि भूमिरूदकं वाक् चतुर्थ्यी च सुनृतां।
एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन।।[14]

कहने का तात्पर्य यह है कि आपके पास घर में जो संसाधन उपलब्ध हैं, आप उसी से अतिथि का सत्कार प्रेमपूर्वक कीजिए।

सामर्थ्य के बाहर जाकर सत्कार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यदि व्यक्ति सामर्थ्य के बाहर जाकर कार्य करेगा तो अतिथि सत्कार में कहीं न कहीं भार की भावना आ जायेगी।

अतिथि के आगमन के समय के अनुसार उसके लौट जाने में पाप की मात्रा घटती या बढ़ती है–

दिवातिथौ विमुखे गते यत्पातकं नृपः।
तदेवाष्टगुणं पुंसस्सूर्योदे विमुखेगता।।[15]

हे नृप! दिन के समय अतिथि के लौट जाने से जितना पाप लगता है उससे आठ गुना पाप सूर्यास्त के समय लौटने से होता है।

अतः हे राजेन्द्र! सूर्यास्त के समय आये हुए अतिथि का गृहस्थ पुरूष अपनी सामर्थ्यानुसार अवश्य सत्कार करें क्योंकि उसका पूजन करने से ही समस्त देवताओं का पूजन हो जाता है–

तस्मात्स्वशक्त्या राजेन्द्र सूर्योढमतिथिं नरः।
पूजयेत्पूजिते तस्मिन्पूजितासर्वदेवताः।।[16]

जिस प्रकार देवताओं की पूजा करते समय सामग्री नहीं श्रद्धा पर ध्यान रखना चाहिए ठीक उसी तरह अतिथि सत्कार में भी प्रेम एवं श्रद्धा के साथ सामर्थ्यानुसार जो भी उत्तम या मध्यम घर में हो उसी से अतिथि का सत्कार कर उसे प्रसन्न किया जा सकता है।

वर्तमान समय में इस आधुनिकता की दौड़ में हमारी संस्कृति फूहड़ सभ्यता के मध्य विलुप्त होने की कगार पर है। इस समय एकांकी परिवारों का फैशन चल पड़ा है। 'पति–पत्नी और हमारे बच्चे' की एक नूतन विचारधारा का जन्म हुए काफी समय हो चुका है। घरों में गाय के लिए एक रोटी निकालने की तो फुर्सत नहीं, फिर ऐसे में कोई अतिथि आ जाता है तो फिर क्या कहने।

तीव्रगामी यातायात के साधनों का विकास हो चुका है, अतः उम्मीद यह की जाती है कि अतिथि घण्टे दो घण्टे के लिए आये और मात्र चाय–पानी पीकर चला जाये। कई बार बातों–बातों में समझा भी दिया जाता है कि ज्यादा लोगों के आने से बच्चों के अध्ययन में बाधा पहुंचेगी, आखिर प्रतिस्पर्धा का युग जो है। भले ही व्यवहार में बच्चे व्यर्थ में समय गवां दें, परन्तु मन में व्याप्त असन्तोष की भावना व्यवहार में झलकने लगती है।

पर ये लोग शायद भूल जाते हैं कि पौराणिक युग में जब अतिथि को देवता मानकर उसकी पूजा की जाती थी तब का ज्ञान–विज्ञान, आज के ज्ञान–विज्ञान से कहीं आगे था। ''युवा पीढ़ी'' सामन्जस्य बिठाने वाली थी। सम्प्रति बच्चे घर में देखते हैं कि किसी अतिथि के आने पर उनके घर में कितनी खीझ उसके खाने और शय्या देने को लेकर होती है तो उनकी भी आदत में वही आ जाता है और परिणामस्वरूप उनके लिए उसके स्वयं के माता–पिता भार स्वरूप हो जाते हैं।

हमारे देश भारत का चप्पा–चप्पा ऐतिहासिक व सांस्कृतिक विरासत समेटे हुए है, जिसे देखने के लिए सुदूर देशों से प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में पर्यटक आते हैं। कई बार समाचार पत्रों में उन पर्यटकों के साथ दुर्व्यवहार, चोरी व हत्या आदि की घटनायें प्रकाश में आती रहती हैं। ऐसे पर्यटक भारत की किस छवि का अपने देष में प्रस्तुत करेंगे। लोगों का चारित्रिक पतन हो रहा है, उन्हें पता ही नहीं कि हमारे प्राचीन साहित्य में अतिथि सत्कार को कितना महत्व दिया गया है। इसका एक मात्र कारण है संस्कृति विषय के अध्ययन के प्रति उदासीनता।

यदि पुनः वेद वाणी का लोग मनन करें, पुराण प्रसंगों का अध्ययन करें तो निश्चित रूप से पुनः अतिथि को वही आदर मिलेगा तथा देश की छवि में सुधार आयेगा। आज इसकी महती आवश्यकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ''अतिथि सत्कार'' की भावना के विषय में 'विष्णुपुराण' में अत्यन्त सारगर्भित ढंग से वर्णन प्राप्त होता है, लोगों को ऐसे उत्कृष्ट विचारों को अवश्य अपनाना चाहिए। अतिथि सत्कार की ऐसी उत्कृष्ट भावना को आत्मसात कर हम अतिथि के प्रति होने वाले अपराध से बच सकेंगे और प्राप्त होने वाले पुण्य के भागीदार बनेंगे तथा हम अपने इहलोक और परलोक दोनों को सुधार लेंगे, साथ ही हमारी सनातनी भारतीय संस्कृति के विश्व प्रसिद्ध अतिथि सत्कार की पतनोन्मुख हो

रही भावना को भी संरक्षित करने में अपना योग देंगे।

अतः हम कह सकते हैं कि 'विष्णुपुराण' में वर्णित अतिथि सत्कार की भावना आज भी प्रासंगिक है और आगे भी रहेगी।

सन्दर्भसूची :

1. वायुपुराण, 1–2–53
2. विष्णुपुराण, 9/15 (तृतीय अंश), गीता प्रेस, गोरखपुर
3. वही, 9/16 (तृतीय अंश),गीता प्रेस, गोरखपुर
4. वही, 11/67 (तृतीय अंश), गीता प्रेस, गोरखपुर
5. वही, 11/69 (तृतीय अंश),गीता प्रेस, गोरखपुर
6. भारतीय संस्कृति–पृ. 30 द्विवेदी शिव बालक
7. मनुस्मृति, 3/102
8. विष्णुपुराण, 11/70 (तृतीय अंश)
9. श्रीमद्भगवद्गीता, 3/13 गीता प्रेस गोरखपुर
10. मनुस्मृति, 3/118
11. ऋग्वेद 10/117/6
12. विष्णुपुराण, 11/107 (तृतीय अंश),गीता प्रेस, गोरखपुर
13. वही, 12/33 (तृतीय अंश),गीता प्रेस, गोरखपुर
14. महाभारत (उद्योग पर्व), 36/34
15. विष्णुपुराण, 11/108 (तृतीय अंश), गीता प्रेस, गोरखपुर
16. वही, 11/109 (तृतीय अंश), गीता प्रेस, गोरखपुर